IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारत में मानव सुरक्षा के समक्ष सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियाँ

डॉ0 शशि सौरभ
सह आचार्य
राजनीति शास्त्र एवं लोक प्रशासन विभाग
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ।

आमूर्त

सुरक्षा की संकल्पना के विकास का क्रम 'राज्य सुरक्षा' की संकल्पना से 'मानव सुरक्षा' की संकल्पना तक पहुँच चुकी है। विकास का यह क्रम दर्शाता है कि किस प्रकार राज्य की केन्द्रियता से हम व्यक्ति की केन्द्रियता तक आ पहुँचे हैं। सुरक्षा केवल बाह्य शत्रुओं से राज्य की सीमाओं, संसाधनों और नागरिकों की ही नहीं, बल्कि राज्य की जनता का आंतरिक खतरों और चुनौतियों से भी उतना ही महत्वपूर्ण है। ये आंतरिक खतरे और चुनौतियाँ राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक भी हो सकती है, जिन्हें गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, विभिन्न स्वरूपों में हिंसा इत्यादि के रूप में देखा जा सकता है। भारत में मानव सुरक्षा के समक्ष विभिन्न प्रकृति की चुनौतियों में से इस शोध पत्र के अंतर्गत सामाजिक– सांस्कृतिक चुनौतियों का अध्ययन किया गया है, जिसमें मूल रूप से जातीय हिंसा, साम्प्रदायिक हिंसा, लिंग आधारित हिंसा और बच्चों के विरूद्ध हिंसा उल्लेखनीय हैं। निःसंदेह यह कहा जा सकता है कि मानव सुरक्षा के समक्ष उत्पन्न समस्त चुनौतियों का सामना करने के लिए समय– समय पर सरकारों के द्वारा प्रयास किये जाते रहे हैं, जिनका पता इस बात से लगता है कि भारत में जहाँ एक तरफ अपराधिक घटनाओं को कम करने के लिए कानूनों का निर्माण किया गया है, वहीं समाज के कमजोर वर्ग के हितों के संरक्षण और उनकी सुरक्षा के लिए भी प्रबंध किये गये हैं। परन्तु आज भी ऐसी सामाजिक– सांस्कृतिक चुनौतियों को देखा जा सकता है, जिनका सामना कानूनी रूप से करने के साथ ही साथ सामाजिक– सांस्कृतिक रूप से किए जाने की आवश्यकता है। यह शोध पत्र इसी उद्देश्य को ध्यान में रख कर भारत में मानव सुरक्षा के समक्ष सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियों का अध्ययन करने व उनके समाधान के लिए सुझाव प्रेषित करने का प्रयास है।

मुख्य शब्द– मानव सुरक्षा, जातीय हिंसा, साम्प्रदायिक हिंसा, लिंग आधारित हिंसा, बच्चों के विरूद्ध हिंसा, सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियाँ

परिचय

प्राचीन काल से राज्य सुरक्षा का विचार प्रचलन में देखने को मिलता है, परन्तु राज्य सुरक्षा से लेकर व्यक्तिगत मानव सुरक्षा तक सुरक्षा की अवधारणा को विस्तारित करने का विचार सर्वप्रथम 1982 में निरस्त्रीकरण और सुरक्षा मुद्दों पर स्वतंत्र आयोग द्वारा व्यक्त किया गया था।[1] कॉमन सिक्योरिटी रिपोर्ट ने सुरक्षा के विशुद्ध सैन्य दृष्टिकोण की पहली व्यापक आलोचना प्रस्तुत की, साथ ही सुरक्षा और लोगों के कल्याण के बीच संबंध पर उचित ध्यान देने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला। शीत युद्ध की समाप्ति और प्रगतिशील शैक्षणिक और नीतिगत हलकों में लंबे समय से चल रहे अनुसंधान और जमीनी स्तर के तर्कों के अधार पर यह महसूस किया गया कि महाशक्तियों के सैन्य खतरों के गायब होने का अर्थ यह नहीं है कि राज्यों के नागरिकों के लिए सुरक्षा का स्तर बढ़ गया है। इस प्रकार व्यक्ति सुरक्षा को महत्व देने पर बल दिया गया। वैश्विक सामाजिक समस्याओं के समाधान के संबंध में चल रहे विमर्श का प्रभाव भी इस संकल्पना के विकास में सहायक सिद्ध हुआ है। इसलिए, मानव सुरक्षा की संकल्पना के तहत ''व्यक्तियों के जीवन और कल्याण के लिए संभावित खतरों को विशेष रूप से सैन्य खतरों से विस्तारित करके आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणीय और स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं को व्यापक रूप से शामिल किया गया।''[2]

औपचारिक रूप से मानव सुरक्षा की संकल्पना यू0एन0डी0पी0 की 1994 की मशहूर मानव विकास रिपोर्ट में सर्वप्रथम देखने को मिलती है, जिसका शीर्षक ''मानव सुरक्षा के नए आयाम'' था। इस रिपोर्ट ने मानव सुरक्षा की एक नई अवधारणा प्रस्तुत की, जो सुरक्षा को क्षेत्रों के बजाय लोगों से, और हथियारों के बजाय विकास से जोड़ती है। इसने यह स्वीकार किया कि लोगों के कल्याण को मापने के लिए केवल आय मापना पर्याप्त नहीं है। 1994 की रिपोर्ट ने इस बात पर जोर दिया कि मानव सुरक्षा लोगों पर केंद्रित है और ''इसका संबंध इस बात से है कि लोग समाज में कैसे रहते हैं, वे अपने अनेक विकल्पों का कितनी स्वतंत्रता से प्रयोग करते हैं, उन्हें बाजार और सामाजिक अवसरों तक कितनी पहुंच प्राप्त है और वे संघर्ष में रहते हैं या शांति में।'' यह अवधारणा लोगों को ''भय से मुक्ति'' और ''अभाव से मुक्ति'' प्रदान करने के महत्व पर केंद्रित है।[3]

मानव सुरक्षा कई सरकारों की नीतिगत चर्चा का विषय बन चुकी है। सन् 1990 और 2000 के दशक में कनाडा और जापान ने इस अवधारणा की थोड़ी भिन्न परिभाषा दी और अपने–अपने हितों के अनुरूप इसका प्रयोग किया। जापान सरकार ने मानव सुरक्षा की एक व्यापक समझ को अपनाया, जिसमें जीवन, दैनिक जीवन और मानवीय गरिमा को खतरे में डालने वाले सभी पहलुओं को शामिल किया गया। दूसरी ओर कनाडाई सरकार ने मानव सुरक्षा की एक संकीर्ण लेकिन फिर भी व्यापक परिभाषा को अपनाया, जो ''भय से मुक्ति'' और ''आवश्यकता से मुक्ति'' के बीच अंतर करती है, साथ ही उनकी विशिष्टता और परस्पर निर्भरता को भी स्वीकार करती है।

---

[1] बेविर, एम0, ''मानव सुरक्षा– एनसाइक्लोपीडिया ऑफ गवर्नेंस, सेज प्रकाशन, पृ0 429 देखें https://sk.sagepub.com/ency/edvol/governance/chpt/human-security#

[2] जॉली, आर0 एवं रे, डी0बी0,मानव सुरक्षा ढ़ांचा और राष्ट्रीय विकास रिर्पोट, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, पृ04 देखें "The Human Security Framework and National Human Development Reports", United Nations Development Programme, National Human Development Report Unit, 2006 at https://hdr.undp.org/system/files/documents/human-security.pdf

[3] स्टाईनर, ए0, ''मानव सुरक्षा अवधारणा की 25वीं वर्षगांठ'' देखें "25th Anniversary of the Human Security concept", February 28, 2019 at https://www.undp.org/speeches/25th-anniversary-human-security-concept

मानव सुरक्षा की अवधारणा

''मानव सुरक्षा की अवधारणा उन पारंपरिक अवधारणाओं से अलग है, जो राज्य की सुरक्षा पर केंद्रित होती हैं।''[4] इस अवधारणा का विषय व्यक्ति हैं, और इसका अंतिम लक्ष्य लोगों को गरीबी और दुराचार जैसी गैर–पारंपरिक आपदाओं से बचाना है। इस अवधारणा को केवल राज्य की सुरक्षा तक सीमित न रखकर, इसे पूरी तरह से प्रतिस्थापित करना नहीं है, बल्कि यह राज्यों के भीतर और बीच में व्याप्त सुरक्षा की समझ को व्यापक रूप से समझने में मदद करती है। इस दृष्टिकोण के केन्द्र में यह समझ है कि मानव सुरक्षा की कमी राज्य के अंदर और उनके मध्य शांति और स्थिरता को कमजोर कर सकती है। देश की सुरक्षा पर ज्यादा जोर देना मानव कल्याण के लिए हानिकारक हो सकता है। यह राज्य सुरक्षा का एक प्रमुख प्रदाता बना रहता है, लेकिन राज्य की सुरक्षा मानव कल्याण के लिए पर्याप्त शर्त नहीं है।

1994 की वैश्विक मानव सुरक्षा रिपोर्ट (एचडीआर) में तर्क दिया गया कि सुरक्षा की अवधारणा को बहुत लंबे समय से संकीर्ण रूप से समझा गया है– बाहरी आक्रमण से क्षेत्र की सुरक्षा, या विदेश नीति में राष्ट्रीय हितों की रक्षा, या परमाणु प्रलय से वैश्विक सुरक्षा के रूप में। इसे लोगों की तुलना में राष्ट्र–राज्यों से अधिक जोड़ा गया है। इस संकीर्ण दृष्टिकोण को स्पष्ट रूप से व्यापक बनाया गया ताकि इसमें भूख, बीमारी और राजनीतिक अस्थिरता जैसे खतरों से व्यक्तियों और समूहों की सुरक्षा; और दैनिक जीवन के स्वरूपों में अचानक और हानिकारक व्यवधानों से सुरक्षा शामिल हो सके। रिपोर्ट में आगे सात मुख्य तत्वों की पहचान की गई जो एक साथ संबोधित किए जाने पर मानव सुरक्षा की बुनियादी जरूरतों को दर्शाते हैं– आर्थिक सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, पर्यावरणीय सुरक्षा, व्यक्तिगत सुरक्षा, सामुदायिक सुरक्षा और राजनीतिक सुरक्षा।[5]

मानव सुरक्षा एक मानवाधिकार है। यह राज्यों की सुरक्षा के विपरीत, लोगों और समुदायों की सुरक्षा को संदर्भित करती है। मानव सुरक्षा इस बात को मानती है कि सुरक्षित महसूस करने से संबंधित कई आयाम हैं, जैसे भय से मुक्ति, अभाव से मुक्ति और अपमान से मुक्ति। सुरक्षा के लिए जन–केंद्रित दृष्टिकोण का प्रभाव इस बात पर पड़ता है कि हम संघर्ष आकलन, कार्यक्रम योजना, कार्यान्वयन और शांति निर्माण पहलों के मूल्यांकन को कैसे अंजाम देते हैं और समझते हैं।

भारतीय संदर्भ में देखा जाए तो हम पाते हैं कि भारतीय समाज में अभी भी ऐसी कई समस्याएं हैं, जो भय, अभाव और अपमान, इन तीनों के पोषक के रूप में देखे जा सकते हैं। इन सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियों का अध्ययन करना इसलिए आवश्यक हो जाता है क्योंकि इनको समाप्त किये बिना मानव सुरक्षा की संकल्पना को मूर्त रूप प्रदान नहीं किया जा सकता।

भारत में मानव सुरक्षा के समक्ष मुख्य सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियाँ

भारत में मानव सुरक्षा के समक्ष चुनौतियों के कई संकेतक हैं। ये संकेतक अधिकतर राज्य के आंतरिक मामले हैं जैसे– गरीबी, भूख, बढ़ती आर्थिक असमानता, जनसंख्या वृद्धि, शरणार्थियों और आंतरिक रूप से विस्थापित व्यक्तियों की संख्या, राज्य के भीतर हिंसक समूह, भ्रष्टाचार और लोकतांत्रिक क्षमताओं का एक अन्य मापदंड, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, स्वच्छता और अन्य सेवाओं का प्रावधान है। ये सभी मामले मानव सुरक्षा के व्यापक अर्थ में आते हैं, जिसका उपयोग अब अंतरराष्ट्रीय युद्ध, गृहयुद्ध, नरसंहार और जनसंख्या विस्थापन से जुड़े परस्पर संबंधित खतरों के समूह का वर्णन करने के लिए व्यापक रूप से किया जाता है।

[4] स्टाईनर, ए0, उपरोक्त

[5] जॉली, आर0 एवं रे, डी0बी0, उपरोक्त, पृ0 4

इसके अलावा, भारत में मानव सुरक्षा के सामने कुछ प्रमुख सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियाँ भी हैं, जिसे जातिगत हिंसा, सांप्रदायिक हिंसा, लिंग आधारित हिंसा और बच्चों के खिलाफ हिंसा के रूप में देखा जा सकता है। जब तक हम जाति, समुदाय, लिंग और बच्चों के विरूद्ध होने वाली हिंसा को खत्म नहीं कर देते, तब तक हम सुरक्षित महसूस नहीं कर सकते। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मानव सुरक्षा के सामने आर्थिक चुनौतियां एक बड़ी चिंता का विषय हैं, लेकिन सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। इस शोध पत्र में इन्हीं सामाजिक–सांस्कृतिक चुनौतियाँ का अध्ययन प्रस्तुत करते हुए इस संदर्भ में मानव सुरक्षा को सुदृढ़ करने पर बल दिया गया है।

जातीय हिंसा

राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो (एनसीआरबी) की रिपोर्ट के अनुसार, 2023 में अनुसूचित जातियों के खिलाफ 57,789 मामले दर्ज किए गए, जो 2022 में दर्ज किए गए 57,582 मामलों की तुलना में 0.4: की वृद्धि दर्शाते हैं।[6] दर्ज अपराध दर 2022 में 28.6 से बढ़कर 2023 में 28.7 हो गई।[7]

भारत में जाति आधारित हिंसा जाति व्यवस्था की पदानुक्रमित संरचना से उपजी है, जो दलितों और निचली जातियों को भेदभाव, मारपीट और सामाजिक बहिष्कार के माध्यम से निशाना बनाती रही है। संवैधानिक सुरक्षा उपायों और संवैधानिक प्रावधानों में जातीय विभेद को समाप्त करने के प्रयासों के बाद भी विशेष रूप में ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित कई हिंसात्मक घटनाएं जारी हैं।

भारत में जाति आधारित हिंसा गहरी जड़ें जमा चुकी है। हिंसा की घटनाएं प्रायः सामाजिक भेद–भाव और प्रतिष्ठा से संबंधित मुद्दों को लेकर होते पाए गए हैं, जिनमें मारने– पीटने से लेकर, हत्या, आगजनी, कमजोर वर्ग की महिलाओं का यौन उत्पीड़न तथा बलात्कार के रूप में आए दिन अखबारों में देखने को मिलती हैं। ये घटनाएं अनुसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम जैसे सख्त कानूनी सुरक्षा के उपायों के बावजूद लगातार हो रही हिंसा को उजागर करती हैं, जिससे कानून के प्रवर्तन और सामाजिक सुधार में कमियाँ सामने आती हैं। ऐसे में कानूनी प्रयासों के साथ ही साथ सामाजिक चेतना का विस्तार सबसे महत्वपूर्ण और आश्यक कदम के रूप में स्वीकारे जा सकते हैं। जिन क्षेत्रों में जाति व्यवस्था के दुषप्रभावों को लेकर जागरूकता फैली है और अनुसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति के मध्य चेतना का विस्तार हुआ है, उन क्षेत्रों में हिंसा मे कमी भी देखने को मिलती है।

सांप्रदायिक हिंसा

सांप्रदायिक हिंसा विभिन्न समुदायों के बीच धार्मिक तनाव से उत्पन्न होती है, जिसे अक्सर राजनीति, गलत सूचना या ऐतिहासिक शिकायतों से बल मिलता है। भारत में ऐसे कई संघर्ष हुए हैं, जिनमें जान–माल का नुकसान हुआ है। ''सेंटर फॉर स्टडी ऑफ सोसाइटी एंड सेकुलरिज्म (सीएसएस) की श्हेगेमनी एंड डेमोलिशन्सरू द टेल ऑफ कम्युनल रायट्स इन इंडिया इन 2024'' नामक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में सांप्रदायिक हिंसा में पिछले वर्ष की तुलना में 2024 में 84 प्रतिशत की चिंताजनक वृद्धि देखी गई''।[8]

[6] हरीश, एस0डब्ल्यू0,(जाति आधारित अत्याचारों का समाधान करने की आवश्यकता) देखें "The need to address caste-based atrocities", The Hindu, 14.10.2025 at https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/the-need-to-address-caste-based-atrocities/article70159373.ece

[7] (भारत में अपराध– 2023 संक्षिप्त आंकड़े, राज्य/ केन्द्र शासित प्रदेश, राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार) देखें Crime in India – 2023 SNAPSHOTS (States/UTs), National Crime Records Bureau, Ministry of Home Affairs, GOI

[8] देखें (भारत में साम्प्रदायिक दंगों में 84 प्रतिशत की वृद्धि देखी गईः रिर्पोट) "India witnessed 84% rise in communal riots in 2024: Report", The New Indian Express, 28.01.2025 at https://www.newindianexpress.com/nation/2025/Jan/28/india-witnessed-84-rise-in-communal-riots-in-2024-report

भारत में सांप्रदायिक हिंसा, धार्मिक ध्रुवीकरण और राजनीतिक लामबंदी से उत्पन्न होती है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ब्रिटिश सरकार द्वारा बोए गए धार्मिक विभेद के बीच आज तक भारत में आंतरिक शांति और व्यवस्था के समक्ष चुनौती बनी हुई है। 1947 में भारत के विभाजन के दौरान, भारत–पाकिस्तान सीमावर्ती क्षेत्र सांप्रदायिक दंगों से सबसे बुरी तरह प्रभावित हुए थे। सीमा के दोनों ओर के समुदायों का बड़े पैमाने पर विस्थापन हुआ, जिसके परिणामस्वरूप लगभग दस लाख लोगों की मौत हुई और व्यापक जन विस्थापन हुआ।

इसी प्रकार, 1984 में सिख विरोधी दंगे एक अन्य घटना है, जिसमें तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या कर दी गई थी, जिसके कारण हजारों सिखों की जान चली गई। बाद की घटनाओं में जो 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में बाबरी मस्जिद विध्वंस और उसके बाद हुए दंगे हैं। अंततः सर्वोच्च न्यायालय के फैसले से मामला बिना किसी सांप्रदायिक अशांति के शांतिपूर्ण ढंग से सुलझा लिया गया। फरवरी–मार्च 2002 में गुजरात में हुए दंगे, जो गुजरात–गोदरा कांड का परिणाम थे, में ट्रेन जलाने से लगभग 1000 लोगों की मौत हुई और राज्य में बड़े पैमाने पर सांप्रदायिक विभाजन हुआ। सांप्रदायिक दंगों और हिंसा के मामले प्रायः गलत सूचना, पहचान की राजनीति और कमजोर संघर्ष समाधान तंत्रों द्वारा और भी बढ़ जाते हैं। कई अन्य घटनाएं भी हैं, जिन पर इस लेख के सीमित दायरे के कारण चर्चा कर पाना संभव नहीं है। परन्तु इससे यह तो स्पष्ट हो जाता है कि साम्प्रदायिक तनाव के कारण उत्पन्न हिंसा निश्चित रूप से देश में मानव सुरक्षा के लिए एक खतरा है।

लिंग आधारित हिंसा

संपूर्ण विश्व में पितृसत्तात्मकता एक गंभीर समस्या रही है, जिसके कारण सदियों से लिंग आधाति भेद– भाव विभिन्न समाजों में व्याप्त रही है। भारत भी इससे अछूता नहीं रहा। परन्तु समस्या और भी गंभीर रूप तब ले लेती है जब यह लिंग आधारित भेद–भाव हिंसात्मक हो जाती है। पुरूषों के द्वारा प्रभुत्व के अहम में स्त्री को भोग के साधन के रूप में देखा जाना लिंग आधारित हिंसा का सबसे बड़ा कारण रहा है। इसके अलावा कई बार दहेज प्रथा, बाल विवाह प्रथा, ऑनर किलिंग और घरेलू हिंसा तथा अन्य आर्थिक और मनोवैज्ञानिक कारणों से भी लिंग आधारित हिंसा के मामलों में बढ़ोत्तरी हुई है। ''भारत में महिलाओं के खिलाफ हिंसा से संबंधित दर्ज मामलों की संख्या वर्षवार इस प्रकार है– सन् 2020 में 371503; सन् 2021 में 428278; सन् 2022 में 4452568 और सन् 2023 में 4482119 जो कि चिन्तनीय सांख्यिकीय है।''[9]

सन् 1972 का मथुरा बलात्कार कांड, महाराष्ट्र हिरासत बलात्कार कांड और लैंगिक अन्याय से संबंधित ऐसे ही अन्य कई मामलों के कारण निःसंदेह बलात्कार को रोकने संबंधी कानूनों में कई सुधार हुए। 16 दिसंबर 2012 को दिल्ली में हुए निर्भया बलात्कार कांड के नाम से जाना जाने वाला क्रूर सामूहिक बलात्कार कांड 2013 में आपराधिक कानून में संशोधन का कारण बना। परन्तु आज भी देहज उत्पीड़न और घरेलू हिंसा के असंख्य मामले दर्ज किए जाते हैं और कई मामलों को घर की चारदीवारी में दफ़ना दिया जाता है, जो वास्तविकता में मानव सुरक्षा के समक्ष एक गंभी चुनौती है। यह इस बात को स्पष्ट कर देता है कि कानूनों से नहीं अपितु सामाजिक परिवर्तन से इस प्रकार की घटनाओं को रोका जा सकता है।

[9] (2023 में महिलाओं के खिलाफ अपराध के 4.5 लाख मामले: राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार) देखें "4.5L cases of crime against women in 2023: NCRB", The New Indian Express, 1.10.2025 at https://www.newindianexpress.com/nation/2025/Oct/01/45l-cases-of-crime-against-women-in-2023-ncrb#:~:text=Nation,and%20Madhya%20Pradesh%20at%2032%2C342.

इसी कम में महिलाओं के साथ ही साथ ट्रांसजेंडर व्यक्ति को भी लिंग आधारित भेदभाव का शिकार होना पड़ता रहा है। ट्रांसजेंडर व्यक्ति अधिनियम के बावजूद ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को अक्सर उत्पीड़न और बहिष्कार का सामना करना पड़ता है। ट्रांसजेंडरों के खिलाफ हिंसा और उनके शोषण के मामले देश के लगभग सभी हिस्सों में दर्ज किए जाते हैं, और कभी–कभी दर्ज नहीं भी किए जाते। यह ट्रांसजेंडरों के प्रति सामाजिक कलंक और भेदभावपूर्ण मानसिकता को दर्शाता है और सुरक्षा कानूनों में मौजूद कमियों को उजागर करता है, जो एक गंभीर चिंता का विषय है। ये मुद्दे गहरी जड़ें जमा चुकी लैंगिक असमानता और अपर्याप्त सुरक्षा तंत्र को दर्शाते है।

बच्चों के विरुद्ध हिंसा

बच्चों के खिलाफ हिंसा में शारीरिक शोषण, यौन शोषण, बाल श्रम, तस्करी और उपेक्षा शामिल हैं। पीओसीएसओ अधिनियम जैसे कानूनों के बावजूद कई मामले दर्ज नहीं किए जाते। भारत में यदि दर्ज मामलों की ही बात करें तो हम पाते हैं कि ''वर्ष 2023 में बच्चों के विरुद्ध अपराध के कुल 1,77,335 मामले दर्ज किए गए, जो 2022 (1,62,449 मामले) की तुलना में 9.2: की वृद्धि दर्शाते हैं।[10] प्रतिशत के हिसाब से, 2023 में श्बच्चों के खिलाफ अपराधश् के अंतर्गत प्रमुख अपराध श्रेणियां श्बच्चों का अपहरण और अगवा करनाश् (79,884 मामले, 45.0:) और श्बच्चों को यौन अपराधों से संरक्षण अधिनियम (पीओसीएसओ)श् (67,694 मामले, 38.2:) थीं। प्रति लाख बच्चों की जनसंख्या पर दर्ज अपराध दर 2023 में 39.9 थी, जबकि 2022 में यह 36.6 थी।''[11]

कठुआ बलात्कार कांड ने पूरे देश को झकझोर दिया, जहां एक 8 वर्षीय बच्ची के साथ बेरहमी से मारपीट की गई और उसकी हत्या कर दी गई। तमिलनाडु में आतिशबाजी जैसे उद्योगों में बाल श्रम और घरेलू काम के लिए तस्करी लगातार बनी हुई समस्याएं हैं। इसी प्रकार ऑनलाइन शोषण में भी वृद्धि हुई है। ये घटनाएं बाल संरक्षण प्रणालियों में खामियों, जागरूकता की कमी और सामाजिक–आर्थिक कमजोरियों को उजागर करती हैं, जो बच्चों को विभिन्न प्रकार के दुर्व्यवहार और हिंसा के प्रति संवेदनशील बनाती हैं।

भारत में बच्चों के विरूद्ध हिंसा में दुर्व्यवहार, तस्करी और शोषण शामिल हैं, भले ही कानूनी सुरक्षा मौजूद हो। उल्लेखनीय मामलों में कठुआ बलात्कार कांड शामिल है, जिसने पूरे देश को झकझोर दिया था। निठारी हत्याकांड में कई बच्चे पीड़ित थे। यौन अपराधों से बच्चों के संरक्षण अधिनियम के तहत बढ़ती रिपोर्टें जागरूकता में वृद्धि के साथ–साथ व्यापकता को भी दर्शाती हैं। बाल श्रम से जुड़ी दुखद घटनाएं, जैसे तमिलनाडु और बिहार में कारखाने दुर्घटनाएं (विभिन्न वर्षों में), जोखिमों को और उजागर करती हैं। 2020 के बाद ऑनलाइन शोषण के मामले भी बढ़े हैं। ये उदाहरण सुरक्षा, जागरूकता और प्रवर्तन तंत्र में प्रणालीगत कमियों को रेखांकित करते हैं।

देश के विभिन्न हिस्सों में बाल श्रम से जुड़ी दुर्घटनाओं के कई मामले हैं। यह उन राज्यों में एक गंभीर मुद्दा बन गया है जहां घोर गरीबी के कारण बच्चों को काम करने के लिए मजबूर किया जाता है और उन्हें शोषकों के सामने धकेल दिया जाता है। इसके लिए, उन्हें काम पर रखने वालों के खिलाफ कार्रवाई की जानी चाहिए और गरीबी उन्मूलन, रोजगार सुनिश्चित करने और कम से कम 18 वर्ष की आयु से पहले बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के उपाय किए जाने चाहिए, ताकि वे परिपक्व होने के बाद रोजगार प्राप्त कर सकें।

[10] (भारत में अपराध– 2023 संक्षिप्त आंकड़े, राज्य/ केन्द्र शासित प्रदेश, राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार) देखें Crime in India – 2023 SNAPSHOTS (States/UTs), National Crime Records Bureau, Ministry of Home Affairs, GOI, p.xii

[11] उपरोक्त

समापन टिप्पणी

भारत में मानव सुरक्षा के समक्ष सामाजिक– सांस्कृतिक चुनौतियों के अध्ययन ने यह स्पष्ट कर दिया है कि समाज के वंचित और कमजोर वर्ग को बाह्य शत्रुओं से कहीं अधिक खतरा आंतरिक शत्रुओं से हैं जिन्हें जाति आधारित हिंसा, समुदाय आधारित हिंसा, लिंग आधारित हिंसा और बच्चों के खिलाफ हिंसा के रूप में देखा जा सकता है। निःसंदेह विभिन्न सरकारों के द्वारा इन समस्याओं का समाधान करने के लिए कठोर से कठोर कनूनों का निर्माण किया गया है। ऐसी नीतियाँ और कार्यक्रम बनाए गए हैं, जो इस प्रकार अपराधिक समस्याओं को कम करें, परन्तु सबसे बड़ी समस्या सामाजिक चेतना को लेकर उत्पन्न होती है। यह चेतना शोषित और शोषक दोनों पक्षों में लाने की आवश्यकता है, जिससे यह समझ विकसित की जा सके कि प्रत्येक व्यक्ति को एक समान मौलिक अधिकार प्राप्त हैं, चाहे वो महिला हो या किसी भी धर्म अथवा जाति का।

विद्यालयों और उच्च शिक्षण संस्थानों में पाठ्यक्रमों में इन समस्याओं को सम्मिलित करने की आवश्यकता है, जिससे समस्या की गंभीरता को समझा जा सके। युवाओं के मध्य जागरूकता का प्रसार करने से न केवल ऐसी घटनाओं का शिकार होने वाले संभावित आयुवर्ग के लोगों को बचाया जा सकता है, बल्कि ऐसे शोषण के विरूद्ध आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता अभियान चलाकर शोषण न करने और शोषण के विरूद्ध आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। इसके साथ ही संविधान का अध्ययन और संवैधानिक प्रावधानों से संबंधित पाठ को न केवल विद्यालय और उच्च शिक्षण संस्थाओं में अनिवार्य किया जाना चाहिए। चाहे विद्यार्थी विज्ञान का हो या वाणिज्य का, चाहे कला का हो या मानविकी का, प्रत्येक विद्यार्थी को संविधान और शोषण को रोकने संबंधित कानूनों का अध्ययन कराए जाने पर बल दिया जाना चाहिए। कानूनों के निर्माण के साथ ही साथ कानूनों के प्रति जागरूकता का होना भी आवश्यक है।

सामाजिक समरसता को बढ़ावा देने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक कार्यकर्ताओं को नियुक्त किया जाए, जो सामाजिक स्तर पर सामाजिक विघटन, हिंसा, शोषण आदि समस्याओं के प्रति लोगों को जागरूक करें और हिंसा के विरूद्ध आवाज उठाने में मदद करें। अंततः यह कहना गलत नहीं होगा कि मानव सुरक्षा के लिए लोगों का जागरूक होना प्राथमिक शर्त है।